वंदनीय माता जी के ममत्व के उदाहरण

महाशक्ति की लोकयात्रा

वंदनीय माता जी ने इन्ही दिनों ओमप्रकाश,दया एवं श्रद्धा के जीवन को संवारा। सतीश (मृत्युंजय शर्मा) एवं शैलो (शैलबाला) भी बड़े हो रहे थे। उनकी पढ़ाई-लिखाई की देखभाल भी उन्हें ही करनी पड़ती थी। बच्चों में जैसा कि अक्सर होता है, उनमें चंचलता, नटखटपन की बहुलता होती है। इन बच्चों में भी यही बात थी, लेकिन बच्चों को मारने-पीटने में माताजी का विश्वास बिल्कुल भी न था। उनका मानना था कि बच्चों को बिना थके प्यार से समझाते रहना चाहिए। जिस दिन उन्हें औचित्य समझ में आ जाता है, वे शरारत करना छोड़ देते हैं। यह स्थिति कहने में जितनी आसान और साधारण लगती है, करने में उतनी ही जटिल और परेशानी पैदा करने वाली है। इसमें बड़े धैर्य एवं ममता की जरूरत पड़ती है और कभी-कभी कठिन पलों से भी गुज़रना पड़ता है। माताजी के मातृत्व को भी ऐसे पलों का सामना करना पड़ा।

ट्रेडिल मशीन में मृतुन्जय का एक्सीडेंट

मार्च 1951 का समय था, ओमप्रकाश की इंटर की परीक्षाएं चल रही थीं। अंग्रेजी का दूसरा पेपर सेकिंड शिफ्ट में था। वह अपने कमरे में बैठे पढ़ रहे थे। प्रातः के लगभग 7:30 बजे होंगे। अब्दुल लतीफ ट्रेडिल मशीन (प्रिंटिंग मशीन) चला रहा था। चंदा नामक माताजी के कोई संबंधी प्रिंटिंग के लिए मैटर कंपोज कर रहे थे। इतने में सतीश ऊपर से आए और उन्होंने अचानक accidently अपना हाथ मशीन में दे डाला।

चंदा बहुत ज़ोर से चिल्लाए,"भैया!" ओमप्रकाश भागे-भागे आए। उन्होंने देखा, सतीश चुप हैं, उन्होंने उठाकर गोद में ले लिया और सिर पर हाथ फेरा। उनको ऐसा लगा कि शायद चोट सिर में लगी है। तभी चंदा ने लगभग सुबकते हुए कहा, "भैया, हाथ! हाथ देखने पर पता चला कि आधी हथेली पलट गई है और उंगलियां लटक रही हैं। इस हृदय विदारक दृश्य को देखकर उन्होंने ताईजी और माताजी को आवाज़ लगाई। दोनों भागी-भागी आईं, ओमप्रकाश

की निक्कर और बनियान दोनों खून से तर हो चुके थे। मथुरा के सिविल सर्जन एस. के. मुखर्जी को दिखाया, उन्होंने सलाह दी कि आगरा ले जाओ। मुखर्जी साहब ने आशंका भी व्यक्त की कि कहीं हाथ काटना ही न पड़ जाए।

इसी बीच परम पूज्य गुरुदेव आ गए। उनके साथ रघुनाथ अग्रवाल, श्यामलाल और कंपाउंडर जगदीश के भाई लक्ष्मण भी थे। दवा-पट्टी की जा चुकी थी, इंजेक्शन भी लग गया था, लेकिन सतीश को बेहोशी आ गई थी। सभी सोच रहे थे कि क्या किया जाए । तभी माताजी ने डॉ. मुखर्जी से कहा, "डॉ. साहब, आप भगवान पर भरोसा रखकर यहीं जो कुछ कर सकते हों, कीजिए ।" पूज्य गुरुदेव ने भी माताजी के इस कथन में हामी भरी। ऑपरेशन किया गया। माताजी धैर्य के साथ ऑपरेशन रूम के बाहर खड़ी रहीं। थोड़ी देर बात ऑपरेशन समाप्त हुआ, बच्चे को वार्ड में ले जाया गया। काफी दिनों के बाद स्थिति में सुधार आया। इस घटना के चिह्न अभी भी मृत्युंजय शर्मा जी के हाथ पर हैं (जब हम उनसे मिले थे तो हमने भी यह नोटिस किया था)

माता जी के ममत्व का अब्दुल वाला उदहारण

माताजी के ममत्व का दायरा जितना विशाल था उससे कहीं अधिक विस्तृत था। विस्तृत का अनुमान उनके इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि उनके लिए जितने प्यारे सतीश (मृत्युंजय) और शैलो थे, उतना ही प्यारा अब्दुल लतीफ भी था। अब्दुल लतीफ नामक यह मुस्लिम युवक अखण्ड ज्योति संस्थान में मशीनमैन था और पत्रिका की छपाई का काम-काज देखता था। परिवार के सदस्यों के साथ माताजी इसके खाने की भी व्यवस्था किया करती थीं। बड़े नियम से वह बीच-बीच में चाय-नाश्ते के लिए पूछ लेतीं। उनका यह व्यवहार कभी-कभी आने वाले संबंधियों को अखर जाता। उनमें से कोई-कोई तो कह भी देता,

"अब्दुल लतीफ के भोजन की व्यवस्था करना बुरा नहीं है लेकिन कम-से-कम उसके बरतन तो अलग रखने चाहिए।"

संबंधियों की इस बात के उत्तर में माताजी कहतीं,

"आचार-विचार का मतलब छुआछूत नहीं होता। इसका मतलब यह है कि हम अपने विचारों और कार्यों में कितने पवित्र और निर्दोष हैं।“

उनकी ये बातें किसी को समझ में नहीं आतीं। काफी-कुछ समझाने के बावजूद संबंधियों के आग्रह यथावत बने रहे। वे अपनी रूढ़िवादी-पुरातन मान्यताओं को उन पर थोपने की कोशिश जब-तब करते ही रहते। संबंधियों के इस बढ़ते आग्रह पर एक दिन उनके यहां काम करने वाली 'ए जू' ने भी माताजी को समझाया । ' ए जू' ने कहा - आखिर आप इन सबकी बात मान क्यों नहीं लेतीं? वे सब ठीक ही तो कहते हैं । कुछ भी हो, है तो वह मुसलमान ही न। उसके लिए अलग बरतन रखने में बुराई ही क्या है? ‘ए जू' की इन बातों ने माताजी को व्यथित कर दिया। वे उठकर दूसरे कमरे में गईं, जहां अभी तक अब्दुल लतीफ के जूठे बरतन रखे थे। उन्होंने उन बरतनों को अपने हाथों से उठाया और बरतन मांजने वाली जगह पर ले आईं। 'ए जू' अभी कुछ और सोच-समझ पाती, इसके पहले ही माताजी बोलीं,

“इतने दिन तुम मेरे पास रहीं, पर तुम मुझे समझ नहीं पाईं। अरे मैं सिर्फ मां हूं, हिंदू की भी मां, मुसलमान की भी मां। मेरे लिए जैसे ओमप्रकाश और सतीश हैं, वैसे ही यह अब्दुल लतीफ है।"

उनकी इन बातों को सुनकर 'ए जू' हतप्रभ रह गई। थोड़ी देर तक तो उसे समझ ही न आया कि वह क्या बोले। जब तक वह कुछ बोलती, तब तक तो माताजी ने अब्दुल लतीफ के जूठे बरतन अपने हाथों से मांग डाले।

'ए जू' को ऐसे लगा जैसे माताजी कोई मानवी नहीं, देवी हों! थोड़े दिनों के बाद पता नहीं किस तरह इस बात का पता अब्दुल लतीफ को भी लगा, सुनकर उनकी आंखों में आंसू आ गए। उसने आंसुओं से छलकती आंखों के साथ उन्हें हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए कहा, “मां, आप सचमुच में मां हो। आपका स्थान फरिश्तों से भी ज़्यादा बुलंद है। आप फातिमा बी की तरह मुकद्दस हो।" हाथ जोड़े ,भाव-विह्वल स्वर में वह कितना कुछ ही कहता रहा। जब माताजी

वहां से चली गईं, तो उसने उस जगह की धूल अपने माथे पर धारण की और दंडवत प्रणाम किया।

ममत्व दर्शाता रामजीवन जी का संस्मरण

मातृत्व के इस अनंत विस्तार का परिचय कभी कभार विलक्षण क्षणों में वह स्वयं भी दे देती थीं। एक बार एक प्रखर गायत्री साधक रामजीवन अखण्ड ज्योति संस्थान आए। पिछले कुछ वर्षों से वह कई कठोर व्रतों का पालन करते हुए गायत्री अनुष्ठान कर रहे थे। अखण्ड ज्योति संस्थान आने पर उन्हें माताजी के चौके में परोसा हुआ भोजन खाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। भोजन करते समय माताजी की एक झलक पाकर वह अपनी किन्हीं अनुभूतियों में डूब गए। अचानक न जाने क्यों उनके मुख से निकला, मां तुम किस तरह मां हो? इस प्रश्न के उत्तर में माताजी बोलीं,

"बेटा, मां इस या उस तरह की नहीं होती। मां सिर्फ मां होती है। मैं सचमुच की मां हूं। बेटा, गुरुदेव की पत्नी के रूप में मां नहीं, केवल सतीश और शैलो की मां नहीं, मैं सबकी मां हूं।"

माताजी के इन वचनों को सुनकर गायत्री के प्रखर साधक रामजीवन को लगा, जैसे कि आज वह गायत्री के तत्त्व और सत्य का साक्षात्कार कर रहे हैं। गायत्री माता ठीक उनके सामने खड़ी हैं। बाद में माताजी की सक्रिय प्रेरणा से ही तो गायत्री तपोभूमि का निर्माण हुआ था।

माता जी के अंतःकरण में अंकुरित हुई गायत्री तपोभूमि के निर्माण की प्रेरणा

गायत्री तपोभूमि के निर्माण की मूल प्रेरणा माताजी के अंतःकरण में ही अंकुरित हुई। उन्होंने एक दिन प्रातः ध्यान की भावदशा में देखा कि "जगन्माता" युगशक्ति गायत्री के रूप में एक मंदिर में विद्यमान हैं। अनेकों परिजन माता की पूजन- अर्चना कर रहे हैं और माता से प्रज्ञा, मेधा व सद्बुद्धि के साथ अपने कष्ट- कठिनाइयों से मुक्ति का वरदान पा रहे हैं। जगदंबा के इस मंदिर की एक और विशेष बात माताजी ने अपने ध्यान में अनुभव की। उन्होंने देखा कि यह मंदिर सामान्य मंदिरों की तरह केवल पूजा-अर्चना भर का

स्थान ही नहीं है बल्कि यहां से लोकहित की अनेकों गतिविधियों का संचालन हो रहा है। सद्ज्ञान की अगणित धाराएं यहीं से "धियो यो नः प्रचोदयात्" का संदेश प्रसारित करती हुई संसार भर में व्याप्त हो रही हैं। हमारे पाठकों में से बहुतों को पता ही होगा फिर भी आइए संस्कृत के इन तीन शब्दों का अर्थ फिर से revise कर लें।

धियो: का अर्थ है, बुद्धि को,

यो न: अर्थ है, हमारी,

प्रचोदयात्: का अर्थ है,शुभ कार्यों में यानि सन्मार्ग की ओर प्रेरित करें।

यही से भगवान महाकाल अपनी युग-प्रत्यावर्तन प्रक्रिया का सूत्रपात कर रहे हैं। इस अद्भुत अनुभूति में डूबी हुई माताजी उस दिन साधना से थोड़ी देर में उठीं।

साधना से उठने पर अपने नित्य-नियम के अनुरूप उन्होंने घर और अखण्ड ज्योति कार्यालय के ज़रूरी काम निबटाए। इसके बाद

परिजनों के आए हुए पत्रों को पढ़ने और उनके उत्तर लिखने का क्रम आया। यह काम परमपूज्य गुरुदेव एवं माताजी मिलकर किया करते थे। इसी बीच कुछ बातें भी हो जातीं। उस दिन पत्रों को खोलते हुए माताजी ने अपनी अंतरानुभूति भी गुरुदेव के सामने खोली ।

गुरुदेव को भी गायत्री तपोभूमि के निर्माण की अनुभूति हुई।

माताजी की सारी बातें सुन लेने के बाद परम पूज्य गुरुदेव ने कहा, आज हमें भी साधना के क्षणों में अपने मार्गदर्शक का कुछ ऐसा ही संदेश मिला है। इस संदेश के अनुरूप हमें ऐसा केंद्र स्थापित करना है, जहां देश के विभिन्न भागों से अनेकों साधक आकर सच्ची अध्यात्म साधना कर सकें। उन्हें आध्यात्मिक तत्त्वदर्शन की वास्तविक अनुभूति हो सके। साथ ही उस महत् कार्य का प्रारंभ हो सके जिसके लिए हम दोनों को भगवान ने धरती पर भेजा है।

माताजी और गुरुदेव की बातों का सारतत्त्व एक था। उन्होंने अपनी बातों के अंत में एक-दूसरे की ओर देखा और काम में लग गए

लेकिन उस दिन से गायत्री तपोभूमि के निर्माण का संकल्प सक्रिय हो गया।

गायत्री तपोभूमि के निर्माण का संकल्प

उपयुक्त भूमि देखी जाने लगी। घर में उस समय केवल 6 हज़ार रुपये की पूंजी थी जिसके आधार पर भूमि खरीदने की बात सोची गई। उस समय मथुरा में किशोरी रमण कॉलेज के साथ जीर्ण अवस्था में एक गायत्री मंदिर था। टीले पर स्थित होने के कारण इसे गायत्री टीला भी कहते थे। इसे लेने की बात जानकारों ने सुझाई लेकिन बात कुछ जमी नहीं। एक तो वह टीला था, नीचे से कटाव भी बहुत पड़ रहा था और भूमि भी बहुत थोड़ी थी। इन कारणों से इस भूमि को छोड़ना पड़ा।

भूमि खरीदने के लिए मंडी रामदास में भी कई जगह प्रयत्न किए गए लेकिन कहीं ढंग से बात न बन सकी। महीनों किए गए इन प्रयत्नों के बेकार जाने पर माताजी ने साधना के क्षणों में उपयुक्त भूमि को तलाशने के प्रयत्न शुरू किए। एक-दो दिन के प्रयास में ही

उन्हें एक भूमि पर प्रकाश पुंज सा उठता दिखा। इसके आध्यात्मिक स्पंदनों को उन्होंने अपनी अंतर्चेतना में अनुभव किया। एक दिन गुरुदेव के साथ घूमने जाते समय उन्होंने यह भूमि प्रत्यक्ष में देखी। यह स्थान मथुरा से लगभग एक किलोमीटर दूर मथुरा-वृंदावन मार्ग पर था। उस समय यहां एक कुआं, एक हॉल और एक बरामदा बना था। यह स्थान सड़क के बिल्कुल पास था। उन क्षणों में गुरुदेव से इसकी चर्चा करने पर गुरुदेव कहीं गहरे विचारों में डूब गए। कुछ पलों के बाद अपनी इस तल्लीनता से उबरने पर उन्होंने कहा,

"आप एकदम ठीक कहती हैं। यह जगह पहले कभी महर्षि दुर्वासा की तपोभूमि रही है। अभी भी यहां उनकी तपस्या के प्रभाव शेष हैं। यह भूमि सब तरह से अपने कार्य के लिए उपयुक्त रहेगी।"

कभी बाल्यकाल में गुरुदेव यहां आए भी थे। इसको खरीदने के लिए बातचीत चलाई गई। जिसकी भूमि थी, वह व्यक्ति भी आसानी से तैयार हो गया। थोड़े ही दिनों में सारी सरकारी औपचारिकताएं पूरी करते हुए भूमि की रजिस्ट्री हो गई। इस तरह भूमि की

समस्या का निवारण तो हो गया लेकिन इसी के साथ एक नई समस्या खड़ी हो गई।भूमि खरीदने के बाद अब गुरुदेव, माताजी के पास बिल्कुल भी पैसे नहीं बचे थे। यद्यपि गुरुदेव को जानने-पहचानने वाले, उनके प्रति आस्था, निष्ठा एवं भक्ति रखने वाले कम नहीं थे फिर भी किसी के आगे याचना करना, अपनी आवश्यकताओं को जग-जाहिर करना, तपोमूर्ति गुरुदेव के तप के नियमों के विरुद्ध था।

अपूर्व अनुदान

गुरुदेव के एक इशारे भर की देर थी, चरणों में धन की ढेरी लग जाती लेकिन यह बात उनके तपोनिष्ठ जीवन की मर्यादा के विरुद्ध थी । धन की ज़रूरत तो माताजी भी अनुभव कर रही थीं। उन्होंने कुछ सोचा और एक पल की देर लगाए बिना अपने सारे आभूषण और जमा किया रुपया पैसा गुरुदेव के चरणों में रख दिया। बिना कहे, बिना कोई हल्का-सा भी संकेत किए बिना तनिक-सा भी जताए बिना माताजी ने मौन भाव से अपना सब कुछ दे डाला।

गुरुदेव ने उन्हें एक बार हल्के से टोका भी, आप ऐसा क्यों करती हैं? कहीं-न-कहीं से धन की कोई व्यवस्था हो ही जाएगी। गुरुदेव की इस बात पर माताजी कुछ बोली नहीं, बस उनकी आंखें भर आईं। उन्हें इस तरह देखकर गुरुदेव भी कुछ बोल न सके। बस चुपचाप उनकी निधि स्वीकार कर ली। गायत्री तपोभूमि के निर्माण एवं गायत्री परिवार के संगठन के लिए उनका यह अपूर्व अनुदान था।

हमारे पाठक इस अनुदान को दर्शाती नीचे दी गयी वीडियो के केवल शुरू के दो मिंट ही देख लें, युगनिर्माण योजना पत्रिका से सम्पादक आदरणीय ईश्वर शरण पांडेय जी इस तथ्य को certify कर रहे हैं।

click here

सामान्यतया नारियों का अपने आभूषणों के प्रति अतिरिक्त मोह देखा जाता है। आयु के किसी भी मोड़ पर उनका यह मोह प्रायः कम होने के बजाय बढ़ता ही जाता है। पहले अपने लिए, फिर

अपने लिए नहीं तो अपनी किसी बेटी या बहू के लिए वे आभूषणों को बनवाती, गढ़वाती रहती हैं। यह सिलसिला कहीं भी, किसी भी समय थमता नहीं, परंतु माताजी ने नारी प्रकृति की इस सामान्य कमजोरी के उलट जाकर यह अद्भुत कार्य कर दिखाया, वह भी बड़ी ही सहजता से। वे ऐसा इसलिए कर सकीं, क्योंकि उन्होंने इस सत्य को गहराई से जान लिया था कि वास्तविक श्रृंगार शरीर का नहीं, व्यक्तित्व का होता है और व्यक्तित्व का श्रृंगार सुवर्ण के रत्नजटित आभूषण नहीं, तप और विद्या है। इन्हीं दोनों के सतत अर्जन से व्यक्तित्व अलंकृत होता है और यह अलंकरण भी ऐसा होता है जिसे देखकर भूतल के सामान्य नर-नारी ही नहीं, ऊर्ध्वलोकों के देव-देवी, ऋषि-महर्षि, सिद्धजन भी चमत्कृत रह जाते हैं। इस सत्य को पहचानने वाली माताजी ने उस दिन केवल अपने आभूषण ही नहीं दिए, बल्कि बहुमूल्य वस्त्रों का भी परित्याग कर दिया और आंतरिक ही नहीं, बाह्य तपस्या के भी सभी आयामों के परिपालन के लिए संकल्पित हो गईं।

उन क्षणों में ऐसा लगा, जैसे

माता सीता ने वनवासी प्रभु राम के साथ चलने के लिए तपस्विनी वेश धारण कर लिया हो।

जिन आंखों ने यह दृश्य निहारा, वे धन्य हो गईं और जो अपने भाव जगत् में अभी इन क्षणों में इस दिव्य दृश्य का साक्षात् कर रहे हैं, उन पर भी माता भगवती और प्रभु श्रीराम की अद्भुत कृपा है। तपोनिरत युगल का संकल्प मूर्त होने लगा। गायत्री तपोभूमि अपना आकार पाने लगी। इसके ऊर्जा केंद्र के रूप में युगशक्ति माता गायत्री का ठीक वैसा ही मंदिर बना, जैसा कि माताजी ने अपनी ध्यानस्थ स्थिति में अनुभव किया था। युगशक्ति की प्राण प्रतिष्ठा से पूर्व माताजी अपने आराध्य के साथ विशेष साधना में संलग्न रहीं। इस शुभ घड़ी में 2400 तीर्थों की रज एवं 2400 पवित्र स्थानों का जल यहां लाया गया। इसके अतिरिक्त और भी कुछ ऐसी दिव्य क्रियाएं गोपनीय स्तर पर संपन्न की गईं, ताकि माता की चेतना इस महामंदिर में सदा जाग्रत रहे और इस स्थान का अमोघ प्रभाव सभी को दीर्घकाल तक अनुभव होता रहे।

मंदिर निर्माण के साथ अन्य गतिविधियों के संचालन की व्यवस्था यहां की गई। पवित्र यज्ञशाला में दिव्य अग्नि स्थापित हुई। साधना सत्रों के साथ अनेकों तरह की योजनाएं यहां से संचालित होने लगीं। दूर-दूर से लोगों के आने का सिलसिला चल पड़ा। जो भी यहां आते थे, उन सबका एक साथ सामूहिक परिचय एक ही था, वे सभी माताजी के बच्चे थे। उन सबके मन अपनी मां के लिए हुलसते थे। उन सभी के प्राणों में अपनी मां के लिए पुकार थी। मां के प्यार का, दुलार का, उनके वात्सल्य का चुंबक उन्हें यहां खींच लाता था। माता भी अपने बच्चों को संस्कार देने के लिए प्रयत्नशील थीं। उनका सतत प्रयास यही था कि उनके बच्चों की चेतना उत्तरोत्तर निर्मल, पवित्र एवं परिष्कृत हो। इसके लिए जो भी आवश्यक होता, वह निरंतर किया करतीं।

To be continued